दैनिक भास्कर
06 शुक्रवार, 10 जनवरी 2020 नोएडा

विचार

पश्चिम एशिया में ईरान का लगातार बढ़ता वर्चस्व अमेरिका, इजराइल तथा खाड़ी देशों के लिए एक मुख्य सुरक्षा चुनौती बना हुआ है।

संपादकीय

कुछ तो गलत है!

मई 2019 को जब भारतीय जनता पार्टी, प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में पहले से अधिक बहुमत के साथ लोकसभा का चुनाव जीतने और केंद्र में दोबारा सरकार बनाने में कामयाब हुई तब शायद किसी ने यह कल्पना नहीं की होगी कि इस ऐतिहासिक जीत के कुछ माह बाद ही केंद्र और देश के आधे से अधिक राज्यों में सत्तारूढ़ भाजपा का जनाधार इस कदर सिकुड़ना शुरू हो जाएगा कि कुछ राज्यों के विधानसभा चुनाव हारने के साथ ही आज देश की सबसे बड़ी पार्टी बन चुकी यह पार्टी छात्र यूनियनों के साथ ही जिला परिषद् जैसे स्थानीय निकायों के चुनाव में भी हार का मुंह देखेगी। यह बात हम नहीं कह रहे हैं बल्कि संचार माध्यमों में छपने वाली और प्रसारित होने वाली खबरें ही ये हाल बयां कर रही हैं। सोलहवीं लोकसभा का चुनाव होने के बाद देश में जितने भी विधानसभा चुनाव हुए हैं सभी जगह भाजपा का प्रदर्शन पहले के मुकाबले बहुत खराब रहा है। दिल्ली से लगे अपेक्षाकृत छोटे राज्य हरियाणा में प्रधान मंत्री और बड़े भाजपा नेताओं की आक्रामक चुनाव रैलियों के बाद भी इस राज्य में भाजपा अपने बल पर सरकार बनाने लायक विधायक नहीं जितवा सकी। इस राज्य में पहले भी भाजपा की बहुमत वाली ही सरकार थी लेकिन इस बार इंडियन नेशनल लोकदल जैसे क्षेत्रीय दल की मदद से सरकार बना सकी। इसके साथ ही महाराष्ट्र विधान सभा के भी चुनाव हुए थे वहां भी उसका प्रदर्शन पहले से कमजोर रहा और इस पार्टी को दोबारा सरकार बनाने का मौका नहीं मिल सका। हरियाणा महाराष्ट्र के बाद अब झारखंड भी हाथ से निकल गया वहां भी जेएमएम, कांग्रेस और राजद गठबंधन की सरकार का गठन हो गया।

ताजा खबर यह है कि महाराष्ट्र का नागपुर जिला जो न केवल राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का गढ़ है बल्कि राज्य के पूर्व मुख्य मंत्री देवेन्द्र फड्नवीस और केन्द्रीय मंत्री नितिन गडकरी का निर्वाचन क्षेत्र भी है, वहां जिलापरिषद के चुनाव में भी भाजपा को पराजय का सामना करना पड़ा है। जिला परिषद् की 50 सीटों में भाजपा महज 15 सीट ही जीत सकी। उधर वाराणसी जहां कुछ समय पहले एक मुस्लिम फिरोज अहमद की संस्कृत अध्यापक के रूप में की नियुक्ति को लेकर पूरे देश में इतना बड़ा बबाल मचा था, वहां के एक संस्कृत विश्वविद्यालय में हुए छात्रसंघ चुनाव में भाजपा के छात्र संगठन अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् को करारी हार का सामना करना पड़ा है। गौरतलब है कि वाराणसी प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का संसदीय निर्वाचन क्षेत्र भी है। विधान सभा से लेकर जिला परिषद् और छात्रसंघ चुनाव परिणाम की ये कहानियां इतना संकेत तो जरूर देती हैं कि सत्तारूढ़ पार्टी में सब कुछ ठीक नहीं चल रहा है, कहीं कुछ गड़बड़ जरूर है। हालात ऐसे ही बने रहे तो अगले महीने होने वाले दिल्ली विधानसभा के चुनाव में किसी तरह की उम्मीद इस पार्टी को नहीं करनी चाहिए। इन चुनाव परिणामों ने पार्टी में कुछ हलचल तो पैदा की है और लोग आपस में ही ये सवाल करने लगे हैं कि पार्टी लगातार हार का सामना क्यों कर रही है? इस सवाल का जवाब भी पार्टी के नेताओं और कार्यकर्ताओं के पास है, लेकिन भयाक्रांत पार्टी कार्यकर्ता खुल कर इसके बारे में कुछ कह भी नहीं पाता।

इस बीच केंद्र सरकार ने कश्मीर से धारा 370 के तहत मिले विशेषाधिकार भी वापस ले लिए, तीन तलाक़ पर भी क़ानून बना दिया। पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान में प्रताड़ना का शिकार हुए हिन्दुओं, पारसियों, बौद्धों और जैन धर्म के अनुयायियों को भारत में नागरिकता देने के साथ ही भारत में घुसपैठ करने वाले इन देशों के गैर हिन्दू विदेशियों को देश से बाहर करने का क़ानून भी बना लिया गया, लेकिन सत्तारूढ़ पार्टी को इसके बावजूद हिन्दू मतों के ध्रुवीकरण का लाभ बाद के चुनावों में क्यों नहीं मिल सका, ये एक गंभीर चिंता का विषय भी हो सकता है। बात दरअसल ये है कि इस पार्टी के भयाक्रांत कार्यकर्ता अपने आला नेताओं को यह सच्चाई नहीं बता पाते कि पार्टी में गड़बड़ क्या, इसके विपरीत चापलूसी करने के चक्कर में आला नेताओं की गलतियों का उनके गुणों के रूप में महिमामंडन करने लगते हैं। महिमा मंडन करने के चक्कर में पार्टी कार्यकर्ता यह भी भूल जाते हैं कि उनके महिमा-मंडन करने से पार्टी को भविष्य में कितना राजनीतिक नुकसान उठाना पड़ सकता है। ऐसे कई मसले हैं जिन पर पार्टी के कार्यकर्ताओं को पार्टी आलाकामान को बताना चाहिए कि कहां गलती हो रही है? मसलन पहले जेएनयू, एएमयू, बीएचयू जैसे देश के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों के छात्र असंतोष को अनदेखा करना, फिर एनआरसी और सीएए जैसे कानूनों के विरोध में हो रहे राष्ट्रव्यापी विरोध प्रदर्शनों को नजर अंदाज करना और अब जेएनयू की प्रायोजित हिंसा का विरोध करने वालों को निशाने पर लेना, ये सब कुछ ऐसे उदाहरण हैं जो सत्तारूढ़ पार्टी के लिए नुकसान का सबब बन रहे हैं।

पार्टी के टिकट पर लोकसभा का चुनाव जीते साक्षी महाराज जैसे नेताओं को इस बात की कतई चिंता नहीं होती कि देश की आर्थिक वृद्धि दर लगातार गिरती जा रही और अगर यह सिलसिला लगातार ऐसे ही चलता रहा तो देश को भयंकर आर्थिक संकट का सामना करना पड़ सकता है। इस समस्या पर चर्चा करने के बजाय ये नेता यह कह कर शेखी बखारने से बाज नहीं आते कि जेएनयू के छात्र आन्दोलन से हमदर्दी रहने वाली दीपिका पादुकोण जैसी फिल्म अभिनेत्रियां टुकड़े-टुकड़े गैंग का हिस्सा हैं। गौरतलब है कि बुधवार 8 जनवरी 2020 को दीपिका पादुकोण जेएनयू में आंदोलनरत छात्रों से मिलने गयीं थीं। दीपिका ने वहां किसी को संबोधित तो नहीं किया था लेकिन आंदोलनरत छात्रों को अपना मौन समर्थन जरूर दिया था। साक्षी महाराज जैसे पार्टी नेताओं को दीपिका पादुकोण का वहां जाना ही इतना बुरा लगता है कि उन्होंने उसके खिलाफ सार्वजनिक रूप से अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करने से भी परहेज नहीं किया।

आज का इतिहास

1623	इटली के वेनीज़ नगर में गाज़ेट नामक विश्व का पहला समाचार पत्र प्रकाशित हुआ।
1692	कोलकाता के निर्माता के रूप में जाने जाने वाले जाब चार्नोक का निधन हुआ।
1731	चार्ल्स फर्नाइस को पीयाकेन्ज़ा का राजा बनाया गया।
1824	ब्रिटेन के रसायनशास्त्री जोज़फ ऐस्पीडियन ने सीमेंट बनाई। उनकी इस उपलब्धि को निर्माण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति समझा जाता है।
1836	प्रोफेसर मधुसूदन गुप्ता ने पहली बार मानव शरीर की आंतरिक संरचना का अध्ययन किया।
1838	लंदन का लॉयड की कॉफी हाउस और रॉयल एक्सचेंज आग द्वारा नष्ट हो गया।
1840	वर्दी पेनी पोस्ट यूनाइटेड किंगडम में शुरू की गई।
1860	संयुक्त राज्य अमेरिका के लॉरेंस मैसाचुसेट्स में पेम्बर्टन मिल के गिरने से 146 श्रमिक मारे गए।
1863	लंदन में विश्व की पहली भूमिगत रेल सेवा शुरू हुई।
1863	पहला अंडरग्राउंड रेलवे लंदन में खोला गया।
1901	सिनसिनाटी शहर में स्थित ग्रैंड ओपेरा हाउस आग लगने से नष्ट हो गया।
1920	वार्सा संधि के आधिकारिक तौर पर प्रभाव में आने से प्रथम विश्व युद्ध समाप्त हुआ।
1923	अंतिम अमेरिकी सेना ने राइनलैंड (जर्मनी) छोड़ा।

विश्व शांति के लिए खतरा है ईरान-अमेरिका तनाव

जतिन कुमार

ईरान-अमेरिका के बीच की दुश्मनी की कहानी कोई नई नहीं है। एक दौर ऐसा भी था जब दोनों देश मोहम्मद रेज़ा पहलवी, जो कि शाह ईरान के नाम से भी जाने जाते है, कि सरफरस्ती में एक दूसरे के बेहद नज़दीक थे। ये रिश्ते इतने मधुर थे कि 1950 के दशक में अमेरिका की मदद से ही ईरान ने अपना परमाणु प्रोग्राम 'एटम फॉर पीस' निति के तहत शुरू किया था। यह सम्बन्ध 1979 तक काफी मधुर थे किन्तु 1979 की इस्लामिक क्रांति ने सब बदल दिया और दोनों देशो के बीच दुश्मनी की एक नई कहानी की शुरुआत होने लगी। आगे चलकर ईरान की परमाणु हथियारों की होड़ ने इस परिस्थिति को और बद से बदतर बना दिया।

अमेरिका द्वारा ईरानी रेवोल्यूशनारी गॉर्डस की अल-क़ुर्दस फ़ोर्स के टॉप कमांडर कासिम सुलेमानी को मार गिराए जाने के बाद से पश्चिम एशिया में एक बार फिर से युद्ध के बादल मंडरा रहे है। अमेरिका की कार्यवाही के जवाब में ईरान ने इराक में स्थित अमेरिकी सैन्य-ठिकानों पर बैलेस्टिक मिसाइलो से हमला किया है। जिनमें अल-अनबर स्थित अयन अल-असद बेस जैसे स्थान शामिल हैं। इराकी कुर्दिस्तान के इन सैन्य-ठिकानों में जमीन से जमीन पर मार करने वाली 15 बैलेस्टिक मिसाइलें तैनात है। अभी के सूरते हाल से इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि तनाव इतने पर ही रुकने वाला नहीं है और प्रेजिडेंट डोनाल्ड ट्रम्प इसका जवाब पूरी ताकत से देंगे।

किन्तु इस घटना को तीसरे विश्व युद्ध की आशंकाओं से जोड़ कर देखना बिलकुल भी सही नहीं होगा, पर हां, इस घटना के क्षेत्रीय तथा अंतराष्ट्रीय परिणाम निश्चित ही गंभीर होंगे। वैसे ईरान-अमेरिका के बीच की दुश्मनी की कहानी कोई नई नहीं है। किन्तु एक दौर ऐसा भी था जब दोनों देश मोहम्मद रेज़ा पहलवी, जो कि शाह ईरान के नाम से भी जाने जाते है, कि सरफरस्ती में एक दूसरे के बेहद नज़दीक थे। ये रिश्ते इतने मधुर थे कि 1950 के दशक में अमेरिका की मदद से ही ईरान ने अपना परमाणु प्रोग्राम 'एटम फॉर पीस' निति के तहत शुरू किया था। यह सम्बन्ध 1979 तक काफी मधुर थे किन्तु 1979 की इस्लामिक क्रांति ने सब बदल दिया और दोनों देशो के बीच दुश्मनी की एक नई कहानी की शुरुआत होने लगी। आगे चलकर ईरान की परमाणु हथियारों की होड़ ने इस परिस्थिति को और बद से बदतर बना दिया। यह बात और है कि अमेरिका के राष्ट्रपति बराक ओबामा ने अपने कार्यकाल में 5+1 (JCPOA) परमाणु डील पर हस्ताक्षर कर ठीक करने की कोशिश की थी। अगर बात वर्तमान तनाव की करे तो साल 2018 से ईरान व अमेरिका के बीच तनाव में लगातार वृद्धि ही हुई है। साल 2018 में अमेरिका का 5+1 डील (JCPOA) से हटने के बाद से ही दोनों देशो के बीच रिश्तो में एक बार फिर खटास पैदा हो गई थी। जिसके बाद से ही ईरान पर दोबारा कई प्रकार के प्रतिबंध लगा दिए गए थे परिणामस्वरूप ईरान की आर्थिक स्थिति पर व्यापक नकरात्मक प्रभाव पड़ने लगा था, तब से दोनों देशों के बीच संबंध लगातार बिगड़ते गए है। अमेरिका लगातार ईरान को हालत बिगाड़ने के लिए जिम्मेदार ठहरता रहा है। साल 2019 में फारस की खाड़ी में तेल के टैंकरों पर हुए हमलों के लिए भी ईरान को जिम्मेदार ठहराया था। इसी श्रृंखला में तेल कंपनी अरामको पर सऊदी अरब में हुए हमले ने स्थिति को और गंभीर कर दिया था। फिर 27 दिसम्बर 2019, किरकुक में इराकी कॉन्ट्रैक्टर, जोकि अमेरिकन मिलिट्री के साथ कार्यरत था, पर हुए हमले में भी अमरीका ने ईरान को ज़िम्मेदार ठहराया और इसे सीधे तौर पर सुलेमानी समर्थित गुट की हरकत माना था।

वास्तव में पश्चिम एशिया में ईरान का लगातार बढ़ता वर्चस्व अमेरिका, इजराइल तथा खाड़ी देशों के लिए एक मुख्य सुरक्षा चुनौती बना हुआ है। इस सन्दर्भ में सुलेमानी की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण थी। ईरान में सुलेमानी किसी राष्ट्रीय नायक से कम नहीं थे, ₹ख़ामेनेई के बाद उन्हें देश में सबसे शक्तिशाली व्यक्ति माना जाता था₹। ऐसा माना जाता है की अल-क़ुद्स फ़ोर्स, जिसके सुलेमानी टॉप कमांडर थे, इराक, लेबनान, सीरिया व यमन में शिया लड़ाकों को प्रशिक्षण तथा समर्थन देने में सीधे तौर से जुडी हुई है। रक्षा विशेषज्ञों के अनुसार सुलेमानी इस्लामिक देशो में शिया मिलिशिया अलायंस बनाने की एक महत्वपूर्ण कड़ी भी थे। इसीलिए काफी लम्बे समय से सुलेमानी इजराइल व अमेरिका की हिट लिस्ट में थे। रक्षा विशेषज्ञों की माने तो लेबनान में हिज़्बुल्लाह,यमन में हुथी ग्रुप्स, सीरिया में शिया लडाकों तथा इराक में हशद अल-सहाबी समूहों को अल-क़ुद्स फ़ोर्स का सीधा समर्थन प्राप्त है। वास्तव में अमेरिका का सीरिया से अपनी फौजें हटाने का निर्णय लेने के बाद से इजराइल के द्वारा सीरिया में लगतार हो रहे हवाई हमलों ने ईरान समर्थित समूहों को इराक भागने पर मजबूर कर दिया था, परिणाम स्वरूप इराक में ईरान समर्थित समूह लगातार ताकतवर होने लगे जोकि क्षेत्रीय संतुलन के लिए एक गंभीर चुनौती साबित हो सकता था। हमले के समय सुलेमानी का इराकी जमींन पर होना तथा हमले में हादश अल-सहाबी के प्रमुख अबू मेहदी अल-मुहदिस का साथ होना इसकी पुष्टि भी करता है की ईरान, इराक में अपनी पकड़ को बड़ा रहा है। निसंदेह इससे एक तरफ दोनों के मारे जाने के बाद इराक में ईरान का प्रभाव व्यापक रूप से कम होगा वहीं दूसरी तरफ इसका सीधा असर सीरिया, यमन तथा लेबनान में ईरान समर्थित समूह पर भी होगा। इसी सन्दर्भ में पश्चिम एशिया में पहले से ख़राब हालत और ज्यादा ख़राब होने की सम्भावनाओ से भी मुँह नहीं फेरा जा सकता। ईरान पर अमेरिका के हमले की स्थिति में हिज़्बुल्लाह द्वारा इजराइल पर हमले की धमकी ने इन आशंकाओं और बड़ा दिया है। यदि पश्चिम एशिया में हालात बिगड़ते है तो भारत भी इससे अछूता नहीं रहेगा। हालत की गंभीरता को देख कर भारत ने अपने विमानों को ईरान के हवाई क्षेत्र में उड़ान न भरने के लिए कहा है। पश्चिम एशिया में 7 मिलियन से भी ज्यादा भारतीय प्रवासी रह रहे है जिनकी सुरक्षा भारत के लिए अति महत्वपूर्ण है। तनाव बढ़ने की स्थिति में भारत को इस क्षेत्र में रह रहे प्रवासियों को भी निकलना पड़ सकता है जोकि एक बड़ी चुनौती हो सकती है। साथ ही यह क्षेत्र भारत की तेल एवं गैस आवश्यकता के 60 प्रतिशत से अधिक भाग का स्रोत भी है जो ऊर्जा सुरक्षा के लिहाज़ से महत्वपूर्ण स्थान रखता है। शुक्रवार को सुलेमानी के मार गिराए जाने के बाद ब्रेंट क्रूड 2.4 प्रतिशत महगा होकर 70.24 डॉलर प्रति बैरल पहुंच गया था किन्तु जानकारों का मानना है कि अमेरिका-ईरान तनाव के कारण भारत को कच्चा तेल की पूर्ति सम्बंधित परेशनी नहीं झेलनी पड़ेगी क्यूंकि सऊदी अरब, वेनेज़ुएला और बाकी पश्चिम एशियाई देश संतुलित पूर्ति करवा सकते है किन्तु दीर्घ काल में कच्चे तेल की कीमत में वृद्धि करंट अकाउंट डेफिसिट तथा कंस्यूमर प्राइस इंडेक्स को प्रभावित कर सकती है। यदि तनाव और बढ़ता है तो भारत के लिए कूटनीतिक स्तर पर अमेरिका व ईरान दोनों के साथ संबंधो को संतुलन में रखना एक चुनौती होगा।

लेखक रक्षा विशेषज्ञ हैं।

अमरीका-ईरान तनाव, फिलहाल तो बाल-बाल बची दुनिया

विजय कपूर

ईरान व इराक के विरुद्ध अमेरिका की नीति हताशा भरी व अतार्किक प्रतीत होती है। अमेरिका को इराक में लगभग दो दशक होने वाले हैं। उसकी सेना अब कमज़ोर नज़र आने लगी है। मुट्ठीभर राकेट इराक के किरकुक सैन्य बेस पर दागे गये थे जिसमें एक सैन्य ठेकेदार की मौत हुई। इसका बदला अमेरिका ने ईरान का समर्थन करने वाले मिलिशिया पर एयर स्ट्राइक्स करके लिया। इसकी प्रतिक्रिया में यह हुआ कि हज़ारों इराकियों ने बगदाद में अमेरिकी दूतावास पर धावा बोल दिया। इस हमले ने अमेरिका की कमज़ोर स्थिति को उजागर कर दिया। इसी के कारण ट्रम्प ने सुलेमानी को कत्ल करने का सनक भरा कदम उठाया।

ईरान के कमांडर कासिम सुलेमानी की हत्या करने के बाद अमेरिका के ट्रम्प प्रशासन को जल्द ही एहसास हो गया कि उसने रणनीतिक गलती कर दी है। अमेरिका के इस दुस्साहस पर न सिर्फ उसके सहयोगी शॉक में आ गये थे बल्कि अपने पवित्र शहर क़ोम की जमकरण मस्जिद की गुंबद पर लाल झंडा फहराकर ईरान ने स्पष्ट संकेत दे दिया था कि वह लम्बे युद्ध के लिए तैयार है। यही नहीं उसने इराक़ में अमेरिका के दो ठिकानों पर 22 मिसाइल दागकर यह संकेत भी दे दिया था कि वह प्रॉक्सी की आड़ में नहीं बल्कि अमेरिका से सीधे टक्कर लेने के लिए तैयार है।अलग थलग पड़ते अमेरिकी राष्ट्रपति डोनल्ड ट्रम्प ने अपनी धमकियों को नियंत्रित करते हुए ईरानी हमले के बाद अपनी प्रेस कांफ्रेंस में शांति की पेशकश करते हुए कहा कि अमेरिका इस झगड़े को और तूल नहीं देना चाहता।

ट्रम्प के 'आल इज़ वेल' बयान से स्पष्ट था कि मध्य पूर्व को युद्ध में न झोंकने के लिए उन पर न सिर्फ विपक्षी डेमोक्रेटिक पार्टी का दबाव था बल्कि उनकी अपनी पार्टी रिपब्लिकन भी युद्ध के पक्ष में नहीं थी।ईरान की 22 मिसाइलों से अमेरिका को कुछ संरचनात्मक नुकसान तो हुआ,लेकिन कोई जान नहीं गई।दरअसल, यह ईरान का प्रतीकात्मक हमला था।ऐसा अकारण नहीं था। एक, जहां से उसके जनरल पर हमला किया गया वहीं मिसाइल दाग कर ईरान ने अपने घरेलू गुस्से को शांत करने का प्रयास किया।दूसरा यह कि अपनी अच्छी मिसाइलों की जगह कमज़ोर मिसाइलों का प्रयोग करके ईरान ने यह संकेत दिया कि वह युद्ध के पक्ष में नहीं है। लेकिन अगर उसे घेरने का प्रयास किया गया तो वह इससे अधिक करने में सक्षम है। ईरान ने जो इजराइल व दुबई पर हमला करने की धमकी दी,उसे इसी पृष्ठभूमि में समझना चाहिए।उसके सुप्रीम लीडर आयतुल्लाह अली खामेनी के इस बयान को भी कि अमेरिका को अभी सिर्फ 'चांटा' मारा गया है, लेकिन अकेला यह 'पर्याप्त नहीं' है।ट्रम्प पर इस बात का भी दबाव था कि इराक की संसद ने अमेरिकी सेना को अपनी धरती से वापस जाने का प्रस्ताव पारित किया और यह भी कि अमेरिकी सेना उसकी धरती व एयर स्पेस का प्रयोग नहीं कर सकती।ऐसा करने के लिए इराकी सांसदों पर अपनी जनता व मिलिशिया का दबाव था।हालांकि विदेशी फ़ौज को निष्कासित करने का अधिकार संसद के पास नहीं है बल्कि एग्जीक्यूटिव के पास है। लेकिन इराकी प्रधानमन्त्री आदिल अब्दुल-महदी, जिन्होंने सुलेमानी की हत्या की निंदा की, ने साफ शब्दों में कह दिया है कि अमेरिका के लिए घर वापस जाने का समय हो गया है।

गौरतलब है कि इराक ने आईएस से लड़ने के लिए अमेरिकी फ़ौज को बुलाया था।

अमेरिका का इराक में अवैध युद्ध 2003 में शुरू हुआ था और अब तक वह अपने आपको इससे निकाल नहीं सका है।इस युद्ध से सबसे ज्यादा लाभ ईरान को हुआ है। न सिर्फ इराक में बल्कि पूरे क्षेत्र में। इस चीज़ ने ही अमेरिका के दो सहयोगियों इज़राइल व सऊदी अरब को भयभीत किया है।इन दोनों ने ही अमेरिका पर दबाव बनाया कि वह ईरान को धमकाने में वृद्धि करे। अमेरिका ने न सिर्फ ऐसी स्थितियां उत्पन्न कर दीं कि इराक में भयंकर किस्म की हिंसा बढ़ी और बाद में सीरिया में भी,बल्कि उसके सहयोगियों की रणनीतिक स्थिति भी कमज़ोर हो गई।अपना वर्चस्व कायम करने में अमेरिका का कोई प्रयास सफल नहीं हुआ है। न वह सीरिया में असद का तख्ता पलट पाया है और न ही ईरान पर प्रतिबंधों से कुछ हासिल हुआ है।

ईरान व इराक के विरुद्ध अमेरिका की नीति हताशा भरी व अतार्किक प्रतीत होती है। अमेरिका को इराक में लगभग दो दशक होने वाले हैं। उसकी सेना अब कमज़ोर नज़र आने लगी है। मुट्ठीभर राकेट इराक के किरकुक सैन्य बेस पर दागे गये थे जिसमें एक सैन्य ठेकेदार की मौत हुई। इसका बदला अमेरिका ने ईरान का समर्थन करने वाले मिलिशिया पर एयर स्ट्राइक्स करके लिया। इसकी प्रतिक्रिया में यह हुआ कि हज़ारों इराकियों ने बगदाद में अमेरिकी दूतावास पर धावा बोल दिया। इस हमले ने अमेरिका की कमज़ोर स्थिति को उजागर कर दिया। इसी के कारण ट्रम्प ने सुलेमानी को कत्ल करने का सनक भरा कदम उठाया।

ट्रम्प की सनक ने अमेरिका को अलग थलग कर दिया और उसके निरंतर अकेले पड़ते सहयोगियों इज़राइल व सऊदी अरब की चिंताओं को गहरा कर दिया। ध्यान रहे कि आज स्थिति यह है कि ईरान के इशारे पर यमन स्थित हौती मिलिशिया सऊदी अरब पर हमला कर सकता है। हाल ही में उसने किया भी है। लेबनान स्थित हिजबुल्ला इजरायल पर हमला करने में सक्षम है।आज की स्थिति के लिए मूलतः ज़िम्मेदार ट्रम्प ही हैं।अच्छे खासे ईरान परमाणु समझौते को रद्द करने की ज़रूरत ही नहीं थी।जब ट्रम्प ने ईरान पर फिर से प्रतिबंध लगाये तो समझौते पर हस्ताक्षर करने वाले अन्य –यूरोपीय देशों, रूस व चीन – को प्रयास करना चाहिए था कि समझौते को बचाया जाये।

ईरान ने काउंटर प्रयास से पहले एक वर्ष तक प्रतीक्षा की।लेकिन इन देशों ने कुछ नहीं किया सिवाए इसके कि कभी-कभार समझौते के पक्ष में बयान जारी कर दिया।हालांकि फ़िलहाल के लिए युद्ध टल गया है (और खाड़ी के रास्ते तेल आपूर्ति बंद होने के जो खतरे थे, जिनका भारत सहित अनेक देशों पर प्रभाव पड़ता, वह भी स्थगित हो गये हैं) लेकिन कितने समय के लिए? कुछ भी अंदाज़ा करना कठिन है।इसलिए आवश्यक है कि यूरोप (और भारत भी), जिसके दोनों अमेरिका व ईरान से अच्छे संबंध हैं,को कम से कम अब तो अपनी ज़िम्मेदारी का निर्वाह करना चाहिए कि अपने डिप्लोमेटिक चैनलों का प्रयोग करते हुए ट्रम्प को रोके व ईरान को शांत करे ताकि न सिर्फ युद्ध के बादल छंट जायें बल्कि अमेरिका व ईरान अपनी आपसी समस्याओं के समाधान के लिए वार्ता की मेज़ पर आ जायें। लेकिन इसके लिए पहले ट्रम्प को अपने सैनिक इराक से वापस बुलाने होंगे।जब तक ऐसा नहीं होगा तब तक युद्ध के बादल आते जाते रहेंगे और दुनिया तनाव में रहेगी।

देश का भविष्य हैं छात्र, सियासत की चक्की में पिसने से बचाना होगा

जगतपाल सिंह

देश की राजनीतिक पार्टियां छात्रों को अपनी-अपनी पार्टी में सदस्य बनाकर एवं छात्रों को अपनी-अपनी पार्टी से सम्बन्धित संगठन बनाकर छात्रों को आमने सामने खड़ा कर देते हैं, नतीजन जो छात्र देश का भविष्य कहे जाते हैं वो राजनीति मे पड़कर अपने उद्देश्य से भटक जाते हैं और शिक्षा कम और राजनिति ज्यादा करने लगते हैं। जबकि उन्हें अपनी ऊर्जा को शिक्षा की ओर ही लगाना चाहिए, तभी वो एक सफल व्यवसायी, अधिकारी, डाक्टर, इंजीनियर, वकील राजनीतिक बन सकते हैं, लेकिन दुख और अफसोस इस बात का है कि तब तक हमारे देश का छात्र कॉलेज और विश्वविद्यालयों की शिक्षा पूरी कर डिग्री तक पहुंचता है, तब तक उनके मन मस्तिष्क मे देश की अस्वस्थ राजनीति की तस्वीर बन जाती है....

जवाहर लाल नेहरू विश्व विद्यालय परिसर मे छात्रों के साथ तीन दर्जन से भी अधिक नकाब पहने युवकों ने लाठी डंडो और लोहे की रॉड से मारपीट करके अनेक छात्रों सहित छात्र संघ की अध्यक्ष एवं प्रोफेसरों को गम्भीर रूप से घायल कर दिया। शिक्षा के इस पावन मन्दिर में हुई इस दुखद घटना से देश की शिक्षा की गरिमा को आघात पहुंचा है। इस दर्दनाक और शर्मनाक घटना को लेकर देश की राजनितिक पार्टियां गर्मा गयी हैं और विदेशी मीडिया ने इस घटना को प्रमुखता से उठाया है। नकाब पोस उद्दण्डियों ने हॉस्टल मे घुसकर मारपीट की तथा वाहनों के साथ तोड़ फोड़ की। इस घटना में छात्र संघ की अध्यक्ष आईशी घोष और महिला प्रोफेसर सुचारिता सेन के सिर मे गम्भीर चोटें आयीं हैं। इस घटना के पीछे छात्रों के गुट की राजनीति नजर आती है। लेफ्ट संघटन के छात्रों का आरोप है कि अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद छात्र संघ के छात्रों ने हमला किया था, हमलावार अभी पुलिस गिरफ्त से बाहर हैं। क्या देश की राजनीति इस स्थिति मे आ गयी है कि छात्रों के सहारे सत्ता पक्ष और विपक्ष आये दिन अपने हित में धरना प्रदर्शन हड़तालें कराकर छात्रों को अपने इशारे पर देश की राजनिति में इस्तेमाल करते हैं, जबकि घर परिवार से दूर रहकर कॉलेज और विश्वविद्यालयो मे शिक्षा दिलाने के लिए अभिभावक अपने बच्चो को भेजकर उनसे एक अच्छा नागरिक बनकर घर, परिवार, समाज व राष्ट्र के हित में कार्य करने की अपेक्षा और आशा लगाए रहते हैं। लेकिन आज देश का छात्र इन राजनितिक लोगों के हाथ की कठपुतली बनकर अपने मुख्य उद्देश्य शिक्षा से भटक कर इनके इशारों पर कार्य करने लगता हैं। ये सही है कि देश के भविष्य के निर्माण के लिए एवं स्वस्थ समाज और सरकार का निर्माण करने के लिए शिक्षित लोगों को राजनिति मे आना चाहिए, लेकिन शिक्षा पूर्ण होने के बाद छात्रों को इस मार्ग को अपनाना चाहिए। इससे पहले छात्रों को शिक्षा पर ही पूर्ण ध्यान देना चाहिए।

देश की राजनितिक पार्टियां छात्रों को अपनी-अपनी पार्टी मे सदस्य बनाकर एवं छात्रों को अपनी-अपनी पार्टी से सम्बन्धित संगठन बनाकर छात्रों को आमने सामने खड़ा कर देते हैं, नतीजन जो छात्र देश का भविष्य कहे जाते हैं वो राजनीति मे पड़कर अपने उद्देश्य से भटक जाते हैं और शिक्षा कम और राजनिति ज्यादा करने लगते हैं। जबकि उन्हें अपनी ऊर्जा को शिक्षा की ओर ही लगाना चाहिए, तभी वो एक सफल व्यवसायी, अधिकारी, डाक्टर, इंजीनियर, वकील राजनीतिक बन सकते हैं, लेकिन दुख और अफसोस इस बात का है कि तब तक हमारे देश का छात्र कॉलेज और विश्वविद्यालयों की शिक्षा पूरी कर डिग्री तक पहुंचता है, तब तक उनके मन मस्तिष्क मे देश की अस्वस्थ राजनीति की तस्वीर बन जाती है और वह उसमे अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने लगता है और वह ना तो सफल राजनितिक बन पाता है, ना ही अन्य मुकामों मे पहुंचकर घर-परिवार, समाज व राष्ट्र को दिशा दिखाने की स्थिति मे होता है, क्योंकि आधे-अधूरे ज्ञान से वह अपने उद्देश्य में सफल नही हो पाता है। इस आधुनिक युग में राजनीति दो प्रकार की हो गई है, पहली राजनीति वह है जैसे छात्र को कक्षा मे गणित, इतिहास, भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों मे शिक्षा दी जाती है और उच्च कक्षाओं मे नामांतरित होकर उसी विषय की राजनिति विज्ञान के रूप मे शिक्षा दी जाती है। नया युग आया नई विचारधाराएं आईं और नई मान्यताए आईं। छात्रो मे अपनी शिष्टता, सभ्यता और अनुशासन प्रियता का पुराना कलेवर उतार फेंक दिया और कॉलिजो और विश्वविद्यालयों मे गुट बन्दिया व अनुशासनहीनता ने घर कर लिया। "सुखार्थी वा त्यजेत विद्या" वाली पुरानी कहावत को छात्रों से दूर कर दिया गया। देश के विद्यालयों मे छात्र आज पूर्ण रूपेण राजनीति कर रहे हैं और गुट बनाकर सत्ता और विपक्ष के हाथ खेलते हैं। परिणाम स्वरूप आये दिन छात्रों के गुटों मे मारपीट जैसी दुखद घटनाएं देखने और सुनने को मिलती हैं। यहां यह कहना भी न्याय संगत होगा कि जो राजनीतिक दल सत्ता मे होते हैं वो छात्रों को राजनीति से दूर रहने के उपदेश देते हैं और जो दल विपक्ष मे होते हैं वो अपनी राजनीति के लिए छात्रो का अवसर के अनुसार भरपूर उपयोग करते है, जो वर्तमान परिपेक्ष मे हमारे देश की राजनीति में देखने को मिल रहा है। देश के अनेक विद्वानों ने छात्रों को राजनीति से दूर रहने की सलाह दी तो कुछ ने राजनीति में पूर्ण भागेदारी निभाने की बात कही और कहा कि राष्ट्रीय नेतृत्व का दायित्व नेतृत्व क्षमता पैदा करें, राष्ट्रीय कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनाए, उन्हे साम्प्रदायिक व पृथकतावादी ताकतों के विरूद्ध एकजुट करें, लोकतंत्र प्रणाली से अवगत करायें और राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करें और सभी छात्रों का यह कर्तव्य बनता है कि वह राष्ट्रहित को सर्वोपरि समझें राजनीति का प्रयोग किसी को खुश करने के लिए नहीं बल्कि सबके विकास के लिए करना चाहिए और उन्हे अपने छात्र जीवन से लगाव कम नहीं करना चाहिए। 1928 में भगत सिंह ने कहा था कि सभी देशों को आजाद कराने वाले वहां के छात्र और नौजवान ही हुआ करते हैं, क्या हिन्दुस्तान के नौजवान अलग-अलग रहकर अपना व अपने देश का अस्तित्व बचा पायेगें। उन्होने कहा था कि देश के भविष्य निर्माण के लिए छात्रो को राजनिति में रहना चाहिए। परन्तु आज देखने को मिल रहा है कि देश का छात्र जिससे घर परिवार, समाज और राष्ट्र आशा करता है कि वह देश का नव निर्माण करके अपनी भागेदारी सुनिश्चित करेगा वह आज राजनीतिज्ञों के इशारों पर काम करके अपनी ऊर्जा को सकारात्मक मार्ग की बजाए नकारात्मक रास्तों पर ले जाकर विध्वंस की राजनीति कर रहा है, जो राष्ट्रहित में कदापि सही और स्वस्थ नहीं है। जब तक देश के कॉलिज और विश्वविद्यालयों में शिक्षा दे रहे शिक्षकों की मानसिकता मे बदलाव नहीं आयेगा और वो सत्ता और विपक्ष की राजनीति से ऊपर उठकर कार्य नहीं करेगें। साथ ही राजनीति के लोगों को भी अपनी सोच और मानसिकता में यह बदलाव लाना होगा कि देश के छात्र इस देश का भविष्य है, उन्हे राजनीति से दूर रखा जाए और जब वो अपनी शिक्